Rs. 5.00/-

LOOK N LEARN MAGAZINE

25th October 2019 Every Fortnight English, Hindi & Gujarati

एक जन्म्यो राज दुलारो, दुनियानी आंखनो तारो

वर्धमान से महावीर की सफर

Year - 13, Vol: 14, Issue: 06, Date: 25.10.2019
Editor: Ashokbhai Sheth 20, Vanik Niwas, 1st floor, Cama Lane, Ghatkopar (West), Mumbai - 400 086.

२७ वा भव श्री महावीर स्वामी

भगवान महावीर का जीव भरतक्षेत्र में स्थित ब्राह्मण कुंडग्राम नामक नगर में ब्राह्मण ऋषभदत्त की पत्नी, देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में मध्यरात्री के समय गर्भरुप में अवतरित हुए।

तीर्थंकर बनने वाले जीव का नियम है कि उनका जन्म उच्च क्षत्रिय कुल में ही हो। किन्तु, भगवान महावीर के साथ इस नियम से विरूध्ध घटना घटी। पूर्व जन्म में उन्होंनें अपने कुल का अभिमान किया था जिसके कारण वे ब्राह्मण कुलमें देवानन्दा की कुक्षी में आये। देवलोक से इन्द्रने अवधिज्ञान से यह देखा और चोंक उठे। उन्होंने शीघ्रही हरिणगमैषी देवको बुलाया, इन्द्र की आज्ञा पाते ही हरिणगमैषी देव ने मध्यरात्रि के समय जाकर देवानन्दा और त्रिशला के गर्भ को बदल दिया। इसको गर्भाहरण की घटना कही जाती है। करोड़ो वर्षो में होनेवाली यह एक आश्चर्यजनक घटना है और कहा कि...

Cheque or Draft:
Arham Yuva Group

Parasdham
Vallabh Baug Lane, Tilak Road,
Ghatkopar (E), Mumbai - 77

Subscription for 10 years
India : Rs. 1000/-
Abroad : Rs. 5000/-

बोधः कभी भी कुल, सम्पत्ति, विद्या, कला आदि का अभिमान नहीं करना चाहिए।

इन्द्र महाराज की सूचना अनुसार हरिणगमैषी देवने त्रिशलामाता की कुक्षी में भगवान का गर्भ स्थापित कर दिया। गर्भ स्थापित होने के बाद गर्भ के प्रभाव से माता त्रिशला ने चौदह स्वप्नों को देखा और वह एकदम प्रसन्न हो उठी।

और उसी प्रसन्नता से वह सिद्धार्थ राजा के पास जाती हैं और स्वप्न की बात करके स्वप्न का फल पूछती है। सिद्धार्थ राजा स्वप्न का फल जानने स्वप्न पाठक को बुलाते है और स्वप्न पाठक राजा सिद्धार्थ और राणी त्रिशला को स्वप्न फल सुनाते है की -"आप एसे महान पुत्ररत्न को जन्म देंगी जो सर्वगुण संपन्न होगा, सुंदर और महाज्ञानी होगा, निड़र और वीर होगा तथा भविष्य में तीर्थंकर पद प्राप्त करेगा।"

त्रिशलामाताने देखे चौदह महास्वप्न

स्वप्न का उत्तम फल जानकर त्रिशलाराणी बहुत खुश हुई... वह धन्य हुई, उनका जीवन कृतकृत्य हुआ। हमारे आगम शास्त्र में भी यह चौदह स्वप्नों को सर्वश्रेष्ठ बताया है। तीर्थंकर की माता को ही ये स्वप्न आतें है।

वह चौदह स्वप्न इस प्रकार थें।

भगवान का जन्म

आजसे लगभग २६०० साल पहले, चैत्र सुदी तेरस की मध्यरात्रि में विश्व के उध्धारक तीर्थंकर भगवान का जन्म मानव देह में हुआ। माता त्रिशला और पिता सिध्धार्थ को बहोत खुशी हुई। ऐसे महान जीव के जन्म से विश्व के सभी जीवों में आनन्द आनन्द व्याप्त हो गया।

शाश्वत नियम अनुसार भगवान के जन्म प्रसंग को विशिष्ट ज्ञान से जानकर ५६ दिक्कुमारिका अपना कर्तव्यपालन करने देवी शक्तिसे शीघ्र ही भगवान के जन्म स्थान पर आती हैं। सब बहुत ही प्रसन्न है। वह सब भगवान को और भगवान की माता को नमस्कार करती हैं। भगवान के प्रति अपना भक्तिभाव व्यक्त करती हैं और भगवान से निवेदन करती है हमारी भक्ति, हमारे भाव का स्वीकार कर हमें भी शाश्वत सुख के मार्ग पर ले जाना और भगवान के गुणगान कर शीघ्र बिदा होती हैं।

भगवान का जन्मोत्सव

यहाँ पृथ्वी पर भगवान का जन्म होता है और उसी समय असंख्य योजन दूर आकाश और पाताल में स्थित देवलोक के समस्त इन्द्रो के आसन चलायमान होने लगते हैं।

सौधर्म देवलोक के इन्द्र "शक्रेन्द्र" अवधिज्ञान से भगवान के जन्म को जानते हैं। देवलोक से ही भगवान के दर्शन करतें हैं और भगवान की स्तुति करतें हैं।

शक्रेन्द्र देव के आमंत्रण का भावपूर्वक स्वीकार कर असंख्य देव - देवियाँ और 63 इन्द्र मेरु पर्वत पर पहुँचते हैं।

भगवानका जन्म उत्सव मेरु पर्वत पर

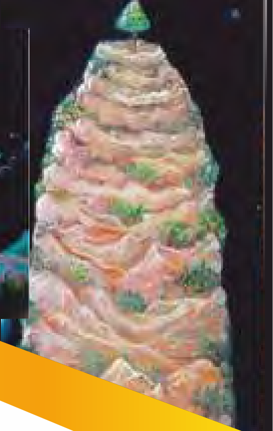

शक्रेन्द्र देव भगवान को लेकर मेरु पर्वत आते हैं। फिर पर्वत के शिखर पर बैठ जाते हैं और भगवान को अपनी गोद में बिठातें हैं। उस समय ६३ इन्द्र तथा असंख्य देव-देवियाँ भी वहाँ उपस्थित हुए हैं। वे सभी भगवान की भक्ति करने के लिए उत्सुक है।

महाकाय कलश सभी इन्द्र और देव-देवियाँ हाथ में कलश लेकर आनंद और उत्साह पूर्वक भगवान का अभिषेक करते हैं। फिर भगवान के पवित्र शरीर को चन्दन आदि सुगंधित द्रव्यों से विलेपन कर अष्टमंगल करतें हैं। अन्तमें शक्रेन्द्र स्वयं अभिषेक करते हैं। अन्य देव-देवियाँ भगवान की स्तुति करतें हैं और गीत - नृत्य और संगीत ध्वारा अपना आनंद व्यक्त करतें हैं और सुबह होने से पहले ही शक्रेन्द्र भगवानको लेकर त्रिशलामाता के पास आते हैं और भगवान को वहाँ सुला देतें हैं।

इस प्रकार भगवान का जन्मोत्सव इन्द्र आदि देव-देवियाँ ध्वारा रात्रिमें ही मनाया जाता हैं।

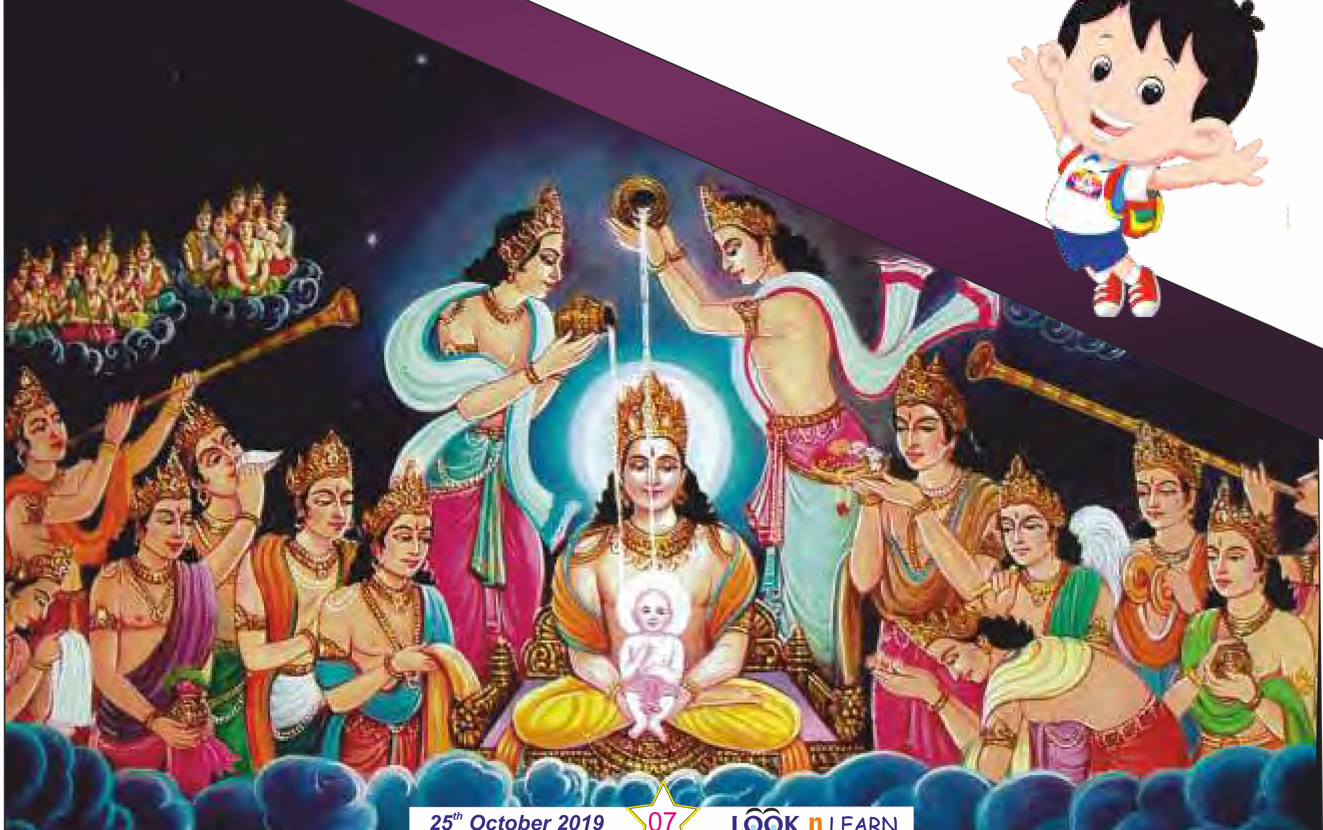

भगवानका महावीर की निर्भयता.. देव द्वारा परिक्षा...

शिशु वर्धमान मातापिता के प्यार के सिंचन से बडे हो रहें हैं। वर्धमान अब आठ साल के हो गए हैं। वर्धमान मित्रों के साथ नगर के बाहर जाकर 'आमलकी' नामक खेल खेलने लगे।

उसी समय देव सभा में शक्रेन्द्रने स्वयं वर्धमान के बल, धैर्य, साहस और निर्भयता की प्रशंसा करते हुए कहा कि, 'बालक होते भी पराक्रमी वर्धमान को कोई शक्तिशाली देव भी डरा नहीं सकता'।

यह सुनकर सभा में स्थित एक देवने ललकारते हुए कहा, एक तो वह मानव है, उसमे बच्चा हैं और अन्न खाने वाला हैं, उसमें एसी निर्भयता कैसे हो सकती है? शक्रेन्द्र के वचन को मिथ्या करने के लिए और भगवान को डराने के लिए वह तुरंत धरती पर, जहाँ बच्चें खेल रहे थे वहाँ फुंकार मारते हुए भयंकर सर्प का रुप लेकर आते है। उसे देखकर सभी बच्चें भागने लगते है और शांत खडे हुए वर्धमान को भी भागने के लिए कहतें हैं। किन्तु वर्धमान तनिक भी नहीं डरे, नहीं हटे और साहसपूर्वक उस सर्प को हाथ से पकडकर दूर कर दिया। यह थी भगवान की निर्भयता...! सर्प के रुप में प्रथम परीक्षा में देव निष्फल हुआ, इसलिए उसने दूसरी परीक्षा लेने का निर्णय किया।

"वर्धमान वीजयी हुए"

इस बार देव एक बालक का रुप लेकर जहाँ वर्धमान अपने बाल मित्रो के साथ खेल रहें थे, वहाँ आ गये और कहने लगे, मुझे भी आपके साथ खेलना है क्या में आप लोगों के साथ खेल सकता हुँ ? बच्चों के हाँ कहने पर उसने सुजाव दिया कि अगर खेल में कुछ शर्त रखें तो खेल में जोश आये और शर्त के अनुसार पराजित बालक विजेता को अपने कन्धे पर बिठाकर घुमाये यह निश्चित किया गया। वह देव जान बुझ कर हार गया और विजेता वर्धमान से बोला - लो, चलो बैठ जाओ मेरे कन्धे पर।

वर्धमान तो मस्तीसे उसके कन्धे पर बैठ गये। देव को परीक्षा का अवसर मिल गया। देवने काया की माया बढाते हुए एक विकराल राक्षस का रुप धारण किया। देखते ही देखते उसने दैविय शक्ति से शरीर को पहाड जैसा बना लिया। उसी समय वर्धमान कुमारने अवधिज्ञान से देखा तो ज्ञात हुआ कि यह तो मुझे डराने के लिए आये हुए देव की माया है। तनिक भी गभराये बिना, उसे शिक्षा देने के लिए वर्धमान ने वज्र जैसा कठिन घूँसा कन्धे पर मारा। उसकी वेदना देव सहन नहीं कर सका। उसके मनमें बालक की निर्भयता के लिए जो संदेह था वह नष्ट हो गया। उसने अपना वास्तविक स्वरुप प्रकट किया और भगवानको प्रणाम करके क्षमा-याचना कर अपने स्थान वापस गया। वर्धमान परीक्षामें विजयी हुए। देवलोक में जय जय नाद हुआ। उसी समय ईन्द्र महाराजने उपस्थित हजारों देवो समक्ष श्री वर्धमान का 'महावीर' ऐसा गुणसंपन्न नाम घोषित किया। भगवान यही नाम से विश्वविख्यात हुए।

महाराजा सिध्धार्थ और महाराणी त्रिशला अपने प्रिय पुत्र वर्धमान को पढाने के लिए ज्ञानशाला में ले जातें है।

दूसरी तरफ देवो के इन्द्र ने अवधिज्ञान से जान लिया की- यह क्या? यह तो तीर्थंकर बननेवाल हैं... और तीर्थंकर बननेवाले व्यक्ति को तो गर्भ से ही मति, श्रुत और अवधिज्ञान होता है।

भगवान को क्या पढना? इसलिए वह शीघ्र ही ब्राह्मण का रुप धारण कर ज्ञानशाला में आते हैं। और बाल भगवान से व्याकरण शास्त्र के अत्यंत कठिन प्रश्न पूछते हैं। भगवान ने तत्काल ही उन प्रश्नों का योग्य प्रत्युत्तर दिया। वहाँ उपस्थित पंड़ित आदि के मन में जो शंका और संदेह था उनका भी समाधान किया।

वर्धमान कुमार के इस ज्ञान को देखकर सारी सभा, पंड़ित, विद्यागुरु आदि आश्चर्य में डूब गये। अन्त में उस वृध्ध ब्राह्मण ने अपना देव रूप प्रकट करते हुए कहाँ, भाईयों! ये तो महाज्ञानी प्रभु है इन्हें पढाया नहीं जाता।

लोगों को आश्चर्य हुआ की यह बालक ज्ञान का महासागर होते हुए भी कितना सरल और अहंकार रहित है!! और हम?? जरा सा कुछ आ गया तो अपने आपको पंड़ित कहने लगते हैं।

भगवान महावीर ज्ञानशाला में...

– Gurubhakt Mehta Parivar

वर्धमान धीरे धीरे बड़े हो रहे हैं। युवा होते ही उनके विवाह की बातें होने लगी। माता त्रिशला और पिता सिध्धार्थ राजा उनके विवाह के लिए उतावले होने लगे। परंतु वर्धमान-महावीर का संसार में कोई मन न था। संसार के बंधन में कोई रूची न थी। वह तो दीक्षा ग्रहण कर आत्म कल्याण करना चाहतें थें।

करुणा के सागर और अनुकंपावान महावीर माता-पिता को दु:खी करना भी नहीं चाहतें थे। माता-पिता की ईच्छा और आज्ञा का उल्लंघन भी नही करना चाहतें थें। अत: उन्होंने एक अति सुंदर और सुकोमल राजकुमारी यशोदा (समरवीर सामंत की पुत्री)से विवाह किया। राजा और राणी ने बड़ी धाम धूम से वर्धमान का विवाह प्रसंग मनाया। जब सब इस खुशी के माहोल में रहतें थे तब वर्धमान अपने आत्मा की खोज में रहतें थें।

कुछ दिन पश्चात: उनके वहाँ एक सुंदर पुत्री का जन्म होता हैं। राजा सिध्धार्थ और राणी अत्यंत प्रसन्न होते है और प्यारी पुत्री का नाम प्रियदर्शना रखतें है। माँ यशोदा बड़े लाड प्यार से प्रियदर्शना को संभालती हैं और प्रसन्न होती हैं।

अब वर्धमान की आयु २८ साल की हो गई है। और भगवान के माता पिता का अनशन आराधना के साथे स्वर्गवास होता हैं।

वर्धमान - महावीर का विवाह प्रसंग

वर्धमान-महावीर को दीक्षा की अनुमति

श्री वर्धमान ने निश्चय किया था जब तक माता-पिता जिवित है वह दीक्षा नहीं लेंगे। यह उनका माता-पिता के लिए राग नहीं था। यह तो माता-पिता को दु:ख न पहुँचाने की करुणा भावना थी।

जब माता-पिता का स्वर्गवास हुआ, तब वे अपने बड़े भाई नंदीवर्धन के पास गये और अत्यंत विनयपूर्वक दोनों हाथ जोड़कर विनंती की, भैया...! आप तो जानते हो, संसार में मेरा मन नहीं लगता, आप से निवेदन है की आप मुझे दीक्षा लेने की अनुमति दें।

बड़े भाई चिन्ता में पड गये। फिर उन्होंने सोचा, विश्व को प्रकाशित करनेवाली ज्योति को मैं अपने स्वार्थ और स्नेह के कारण कैसे रोक सकता हुँ? इसलिए उन्होंने कहाँ, मैं आपकी भावना का आदर करता हुँ, किन्तु माता-पिता के वियोग का दु:ख अभी कम नहीं हुआ है और आप भी दीक्षा ले लेंगे...! आप दो वर्ष और रुक जाईए। श्री वर्धमान ने बड़े भाई की यह प्रार्थना का आदरपूर्वक स्वीकार किया और दो वर्ष रुक जाने का निश्चय किया।

बच्चों! देखो! स्वयं भगवान होने के बावजूद भी वे कैसे विनय, शिस्त और आदरपूर्वक बड़े भाई की आज्ञा और भावना का स्वीकार करतें हैं। भगवान का जीवन चरित्र पढते पढते आपको भी भगवान जैसे बनने का प्रयत्न करना है। विनय, नम्रता, बड़ो के लिए आदर, माता-पिता की इच्छा को पूरी करनी चाहिए। किसी को दु:ख पहुँचे ऐसे कोई काम नहीं करना चाहिए।

"देव द्वारा प्रार्थना"

वर्धमानने बडे भाई नन्दीवर्धन की प्रार्थना का स्वीकार कर दो साल बाद दीक्षा लेनेका निर्णय लिया।

अब वह संसार मे रहते हुए भी साधु जैसा सरल और संयमी जीवन जी रहे थे। एक वर्ष पूर्ण हुआ। अब भगवान २९ वर्ष के हुए। उन्होंने अवधिज्ञान से जाना कि अब दीक्षा लेने मे सिर्फ एक वर्ष बाकी है। अब उन्होंने ज्यादा समय साधना और अपने आत्मा की पहचान में बिताना शुरु कर दिया।

विश्व के सभी जीवो का कल्याण करना हो तो समग्र ब्रह्माड की व्यवस्था, उसके द्रव्य, गुण, उनके विविध तत्त्वोंका त्रिकाल और प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। तभी दूसरोंको ज्ञान और उपदेश दिया जाता है और सब को सच्चा मार्ग दिखाया जा सकता है और मोक्ष की ओर ले जा सकतें हैं। अतः इस ज्ञान की प्राप्ति के लिए घर, परिवार, आदि छोड़कर दीक्षा लेनी जरुरी है। वर्धमान इसके लिए अपनी आत्माको तैयार कर रहें हैं। वहाँ देवलोक से देव उनके आवास में आ पहुँचते है और दोनो हाथ जोडकर नमस्कार करतें हुए कहतें हैं।

जय जय नंदा...! जय जय द्दा...!

अर्थात - आपका जय हो। आपका कल्याण हो..।

फिर प्रार्थना करतें हैं कि, 'आप विश्वमें सुख, शांति और कल्याण करनेवाले धर्मतीर्थ की शीघ्र ही स्थापना करीए।'

वर्धमान का वार्षिक दान

तीर्थंकरों के लिये एक ऐसा नियम है कि गृहत्याग से पूर्व एक वर्ष अर्थात् दीक्षा के दिन तक दान की वृष्टि करना। वर्धमान महावीर ने भी दिन-दुखी आदि के उद्धार के लिए मुक्त हाथों से दान देना प्रारंभ किया। इस दान में स्वयं की संपत्ति के अलावा देवो द्वारा लाए गए द्रव्य का भी उपयोग किया। इस दान में धन, सुवर्ण, रत्नों के अलावा वस्त्रो, अलंकार आदि अनेक वस्तुएँ होती हैं। वर्धमान महावीर जिसे जो चाहिए उसे वही देते हैं। लोग भगवान के पवित्र हाथों से दी गई प्रसादी को प्राप्त कर प्रसन्न होते हैं।

भगवान प्रति दिन प्रात: तीन घन्टे तक एक करोड आठ लाख सुवर्ण मुद्रओं का दान करते हैं। इस प्रकार लाखो मनुष्यों के दारिद्र और दिनता को दूर कर फिर दीक्षा ग्रहण करतें हैं।

दान मानव जाति के लिए सदैव आवश्यक है।

बच्चों हमें भी प्रति दिन कमसे कम एक रुपया या एक रोटी दान करके भगवान के बताये हुए इस दानधर्म का आदर करना चाहिए।

महावीर की भव्य दीक्षा यात्रा...

एक वर्ष तक दान देकर, महावीर विश्वकल्याण के लिए अपना परिवार, मित्रो, संबंधी, धन, दौलत आदि सबकुछ त्याग कर दीक्षा लेने के लिए तैयार हो गये। उस समय उनके विचार और भाव एकदम शुद्ध थे... और आत्मा को शुद्ध करने की दिशामें आगे बढ रहें थें।

बडे भाई नन्दीवर्धनने दीक्षा की भव्य तैयारीयाँ करवाई। सर्वत्र आनंद आनंद हो गया। समग्र देश यह महोत्सव के लिए उत्सुक था।

मागसर वदी दसमी का मंगल दिन था। महान साधना करके सिध्धि प्राप्त करने के लिए भगवानने शुभ मुहूर्त में राजमहल से प्रस्थान किया और भव्य और दिव्य शिबिका (पालकी) में बैठे। देवों और इन्द्रों ने पालकी उठाई। जय जय नाद से वातावरण गुँज ऊठा। हजारों मनुष्यों ने भगवान को... उनके त्याग को... वंदन नमस्कार किया और भारी मन से बिदा कीया।

केशलुंचन तथा संयम-स्वीकार...

भगवान महावीर की भव्य दीक्षा यात्रा कारतक वदी १० को निकली। भगवानने अपने पहने हुए सारे वस्त्र और अलंकार उतारकर कुलवृध्धा को सोंप दिये। फिर अशोक वृक्ष के नीचे आकर खड़े हो गये। कुलवृध्धा ने सारे वस्त्र और अलंकार का स्वीकार किया और हितशिक्षा देते हुए कहा कि - आप संयम मार्ग मे सदैव आगे बढ़ते रहो... साधना और तप द्वारा अनन्त प्रकाश की प्राप्ति करो... विघ्नरूप कर्मो को नष्ट कर अनन्त सिध्धि को प्राप्त करो..!

हजारों मनुष्यों हाथ जोड़ भगवान को प्रणाम करके खड़े है। भगवानने दोनों हाथों से पंचमुष्टि लोच करते हुए सारे केश खींचकर दूर किये। भगवान के केशों को इन्द्रने ग्रहण किया।

लोच के बाद भगवानने ‘‘णमो सिद्धाणं’’ शब्द से सभी सिध्ध भगवंतो को भाव से नमस्कार किया। फिर ‘‘करेमि भंते’’ प्रतिज्ञा सूत्र द्वारा आजीवन सामायिक व्रत को ग्रहण को किया और साधुधर्म का स्वीकार किया। फिर साधुधर्म में आवश्यक पाँच महाव्रत-जैसे, अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह को ग्रहण किया।

जानते हो... बच्चों... यह पाँच महाव्रत का पालन करने से क्या होता है? इससे नये कर्मो को रोक सकते हैं और पुराने कर्मो को नष्ट कर सकतें है।

बच्चों! जैनधर्म साधुधर्म के पालन के लिए जैसे पाँच महाव्रतं बतायें है, वैसे श्रावक धर्म के लिए बारह व्रतों बतायें हैं, वह उनसे थोडे सरल होतें हैं और हम आसानी से उनका पालन कर सकतें हैं। जब तक हम दीक्षा लेकर साधु नहीं बन सकतें है तब तक हमें श्रावक धर्म का पालन करना चाहिए।

भगवान महावीर साधना के मार्ग पर...

भगवान महावीर ने दीक्षा ग्रहण करने के लिए... स्वयं अपने हाथों से ''केश लूंचन विधि'' कि... बादमे दीक्षा के प्रतिज्ञा पाठ बोले... और सभी लोगों ने अत्यंत भाव से भगवान को वंदन नमस्कार किया..!

इन्द्र महाराज ने उनके बाएँ कन्धे पर ''देवदूष्य'' नामक अति मूल्यावान वस्त्र को स्थापित किया..! चारों और जयजयकार के नारे गुंजने लगे..!

भगवान का जन्म तीर्थंकर के रूप में हुआ था। अतः जन्मसे ही उन्हें पाँच ज्ञान में से तीन ज्ञान... मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान प्राप्त थे। अब जब वें दीक्षित हो गये... जब उन्हों ने संयम स्वीकार किया... उसी समय भगवान को चौथा ज्ञान मनःपर्यव ज्ञान प्रगट हुआ। यह ज्ञान के द्वारा भगवान मनवाले प्राणीओ और मनुष्यों के विचारों को जान सकतें हैं।

बस... यहाँ से भगवान तप और साधना में आगे बढ़ने के लिए सबको छोड़कर अकेले आगे बढे... उन्होंने अपना प्रथम विहार ''अस्थिक'' गाँव की और किया..!

बच्चों..! देखो..! कल तक जो एक राजकुमार थे, महलो में रहनेवाले थे... किंमति वस्त्रों एव अलंकारो से शोभित थें... जिनकी सेवामें अनेक नोकर... चाकर थे... आज... आज... वही इन्सान सबकुछ... साधन-सामग्री... परिवार सबको छोड़कर... अरे...! अपने शरीर के सारे वस्त्र और अलंकार को त्याग कर.. खुले पाँव... अकेले जंगल की और साधना करने... अपने कर्मो को नष्ट करने... परम सुख की प्राप्ति के लिए... कितनी प्रसन्नतासे जा रहें है..!!

साधना का मार्ग सदैव कठिन ही होता है। यह मार्ग मे अनेक उपसर्ग भी आते हैं। मगर जो साधक है, वह तो समभावपूर्वक हर एक उपसर्ग को सहन करतें हैं और अपने लक्ष्य को पूर्ण करने आगे ही बढ़ते जाते हैं।

तीर्थंकर परमात्मा का अंतिम लक्ष्य निर्वाण प्राप्ति होता हैं। इसकी प्राप्ति के लिए उग्र तप और संयमधर्म की आराधना करके सभी कर्मो का क्षय करना पड़ता है। भगवान महावीरने भी यही लक्ष्य प्राप्ति के लिए साधना शुरू कर दी।

अकेले, वस्त्र विहीन शरीर, मौन और प्रायः उपवासी... यह हुई शरीर से साधना...!

भगवान की महासाधना

मन से सभी जीवों के प्रति मैत्री, करूणा, दया भाव और सबके आत्म कल्याण की भावना..!

खड़े खड़े ध्यान की अवस्था..! आत्मा की शुध्धि करने के लिए भगवानने एसी कठिन साधना साडे बारह वर्ष तक की और जानते हो बच्चों... यह साडे बारह वर्ष मे निंद कितनी की...? सिर्फ 48 मिनिट...!!! मतलब साडे बारह वर्ष मे एक घंटे के लिए भी सोये नहीं..!! और हम....??

साधना करनी हो... आत्मा की शुध्धि करनी हो तो हमें प्रमाद नहीं करना चाहिए।

LOOK N LEARN
Children's Jain MAGAZINE

Please contact us for your Valuable Feedbacks, Gifting a Magazine, Complaints, Suggestions, or any Change of Address on...

Address :- Look n Learn Magazine
Parasdham,
Vallabh baug Lane,
Tilak Road, Ghatkopar (E),
Mumbai-77

Contact No :- 022-21027676

Email ID :- jainmagazine9@gmail.com

Sankalp: I shall remain calm even on listening my Critisism

Registered with Registrar of Newspapers under RNI No. MAH MUL/2011/40056
Vol.: 14, Issue: 06, Date:.25.10.2019, Postal Registration No. MNE/171/2018-20.
Date of Posting / Date of Publication 10th & 25th of every month.
License to post without prepayment, WPP license No. MR/Tech/WPP-273/NE/2019.
Look N Learn - Posted at Mumbai patrika channel sorting office Mumbai -1

भगवान का प्रथम पारणा

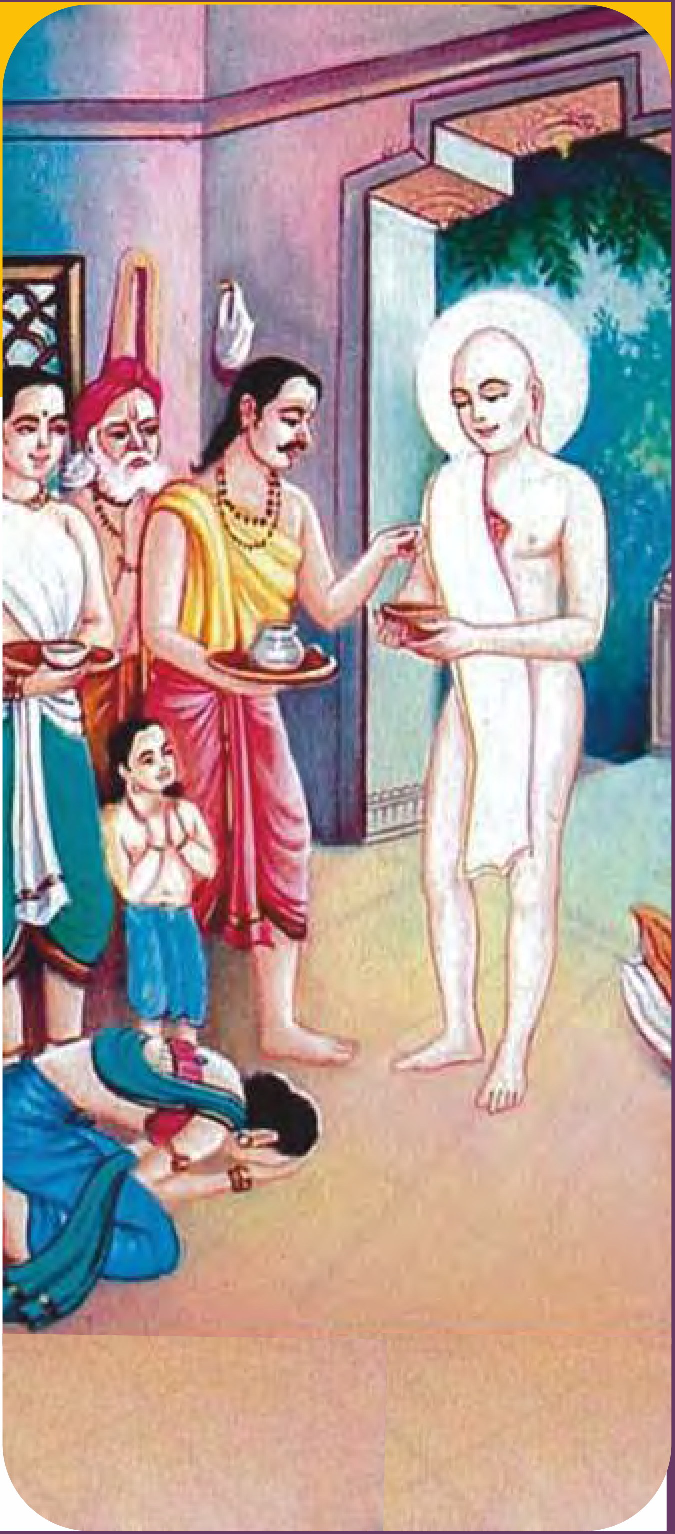

स्वयं दीक्षित होकर भगवान अकेले विहार करके अस्थिक गाँव में आये। वहाँ वे एक वृक्षके नीचे ध्यानस्थ मुद्रामें खड़े होकर ध्यान करने लगे। दीक्षाके दो दिन बीत गये... आज उनका छट्ठका पारणा हैं। वे एक गृहस्थके वहाँ गौचरी के लिए जातें हैं।

बच्चों! तीर्थंकर हंमेशां ''करपात्री'' होते हैं अर्थात् वे हाथ में लेकर ही भोजन करतें हैं। क्योंकि तीर्थंकर के हाथोकी रचना ही ऐसी होती है कि हाथ से एक बूंद भी नीचे नहीं गिरती...!

परंतु, सब साधु 'करपात्री' नहीं हो सकते। इस कारण साधु वर्ग को पात्र रखने में और पात्र द्वारा भोजन करने में कोई दुविधा नहीं है, यह निर्देश भगवान ने अपने उपदेशों मे स्पष्ट रुप से साधु - साध्वी के लिए दिया है।

Publisher, Printer and Owner Ashok R. Sheth, Printed at : Accurate Graphics Pvt. Ltd., 15-A, Samrat Mill Compound, L.B.S Marg, Vikhroli (W), Mumbai - 400 079.
Publish at Mumbai : 20, Vanik Nivas, Kama Lane, Ghatkopar (W), Mumbai - 86. Editor : Ashok R. Sheth